

167

भारत का विधि आयोग

पेटेंट (संशोधन) विधेयक, 1998

से

संबंधित

एक सौ सड़सठवीं रिपोर्ट

फरवरी, 1999

विषय सूची

अनुक्रमणिका		पृष्ठ
अध्याय 1	प्रस्तावना	1
अध्याय 2	निष्कर्ष और सिफारिशें	7

न्यायमूर्ति
बी०पी० जीवन रेड्डी
अध्यक्ष, भारत का विधि आयोग

भारत का विधि आयोग
शास्त्री भवन
नई दिल्ली-110001
टेली: 3384475
निवास

सं० 6(3)(54)/99-वि०आ०(वि०स०)

1, जनपथ
नई दिल्ली-110001
टेलीफोन 3019465
26 फरवरी, 1999

प्रिय डा० एम० थम्बी दुरई,

मैं, "पेटेंट (संशोधन) विधेयक, 1998 से संबंधित 167वीं रिपोर्ट भेज रहा हूँ।

2. विधि आयोग ने, पूर्वोक्त विधेयक में अंतर्विष्ट उपबंधों के मूलभूत महत्व को ध्यान में रखते हुए और इस तथ्य पर विचार किए बिना कि इसे पहले ही राज्य सभा द्वारा पारित कर दिया गया है, स्वप्रेरणा से पूर्वोक्त विषय का अध्ययन करने पर विचार किया था। यह असामान्य कदम विधेयक में कतिपय महत्वपूर्ण ऐसे लोगों को देखते हुए उठाया गया है जो हमारे राष्ट्रीय हित को गंभीर रूप से प्रभावित करते हैं।

3. रिपोर्ट में अंतर्विष्ट सिफारिशों पर, सरकार द्वारा और बजट सत्र में उक्त संशोधन विधेयक पर वाद-विवाद करते समय, संसद् द्वारा विचार किया जा सकता है।

सादर,

भवदीय

(बी०पी० जीवन रेड्डी)

डा० एम० थम्बी दुरई
विधि, न्याय और कंपनी कार्य मंत्री
भारत सरकार
शास्त्री भवन
नई दिल्ली

अध्याय 1

प्रारंभिक

1.1 रिपोर्ट का मूल:—भारत के विधि आयोग ने, पेटेंट (संशोधन) विधेयक, 1998 (16 दिसम्बर, 1998 को राज्य सभा में पुरःस्थापित और 22 दिसम्बर, 1998 को राज्य सभा द्वारा पारित), पर उसमें अंतर्विष्ट उपबंधों के मौलिक महत्व को देखते हुए और इस तथ्य को ध्यान में लाए बिना कि यह राज्य सभा द्वारा पहले ही पारित किया जा चुका है, स्वप्रेरणा से अध्ययन किया है। विधेयक में कतिपय लोपों को देखते हुए, यह अप्रायिक कदम उठाया जा रहा है। उदाहरण के लिए यद्यपि, बौद्धिक संपत्ति अधिकारों के व्यापार से संबंधित पहलुओं विषयक करार (बौ०सं०अ०व्या०सं०प०) का अनुच्छेद 27, सदस्य राज्यों को कतिपय छूटों का उपबंध करने के लिए हकदार बनाता है किन्तु उन्हें विधेयक में समाविष्ट नहीं किया गया है। उक्त लोप हमारे राष्ट्रीय हितों का गंभीर रूप से अतिक्रमण करते हैं। कुछ अन्य बातें भी हैं जो यह रिपोर्ट प्रकट करेगी। संशोधनकारी विधेयक के उपबंधों का गहराई से विचार करके और इस विषय पर अनेक विशेषज्ञों से परामर्श करने के पश्चात्, विधि आयोग यह रिपोर्ट प्रस्तुत कर रहा है। रिपोर्ट में अंतर्विष्ट सिफारिशों पर सरकार द्वारा और लोक सभा द्वारा बजट सत्र में उक्त संशोधनकारी विधेयक पर वाद-विवाद करते समय विचार किया जा सकता है।

1.2 संक्षिप्त इतिवृत्त: पेटेंट अधिनियम, 1970 पेटेंटों से संबंधित विधि का संशोधन और समेकन करने के लिए संसद् द्वारा अधिनियमित किया गया था। यह न्यायमूर्ति श्री एन० राज गोपाल अयंगर (उच्चतम न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश) द्वारा तैयार की गई और संसद् की संयुक्त समिति की 1 नवम्बर, 1966 की रिपोर्ट द्वारा यथाउपांतरित व्यापक रिपोर्ट पर आधारित था।

1.2.1 भारत ने, विश्व व्यापार संगठन (वि०व्या०सं०) की स्थापना के लिए करार पर हस्ताक्षर किए हैं जिसमें बौद्धिक संपत्ति अधिकारों के व्यापार से संबंधित पहलुओं विषयक करार (बौ०सं०अ०व्या०क०) भी है। वि०व्या०सं० करार 1 जनवरी, 1995 से प्रवृत्त हुआ है। बौ०सं०अ०व्या०क० सरकार के अधीन भारत की बाध्यताओं को पूरा करने की दृष्टि से पेटेंट अधिनियम, 1970 का संशोधन करना आवश्यक हो गया है। पेटेंट (संशोधन) विधेयक, 1998 (16.12.1998 को राज्य सभा में यथा पुरःस्थापित 1998 का विधेयक संख्यांक 44) के उद्देश्यों और कारणों के कथन से लिए गए एक उद्धरण में 1.1.1995 के पश्चात् होने वाली घटनाओं का कालानुक्रम दिया गया है, जो निम्नवत् है:—

“2. बौ०सं०अ०व्या०क० करार में, अन्य बातों के साथ-साथ, बौद्धिक संपत्ति के आठ क्षेत्रों की बाबत सदस्य देशों द्वारा अपनाए जाने के लिए अपेक्षित न्यूनतम स्तर विहित हैं। यद्यपि, भारत के पास अनुच्छेद 65 के अधीन पांच वर्ष (तारीख 1.1.1995 से) की संक्रमण अवधि करार के उपबंधों को लागू करने के लिए है और पांच वर्ष की और अवधि अब तक असंरक्षित प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों पर उत्पाद पेटेंट संरक्षण का विस्तार करने के लिए है, तथापि कतिपय बाध्यताओं को, जैसा कि पश्चात्पूर्व पैराओं में स्पष्ट किया गया है, तारीख 1.1.1995 से पूर्ण किया जाना अपेक्षित था।”

“3. बौ०सं०अ०व्या०क० करार के अनुच्छेद 70.9 के निबंधनों के अनुसार, ऊपर यथावर्णित संक्रमण अवधियों के होते हुए भी, ऐसे सदस्य देशों द्वारा, जो भेषजिक और कृषि रसायनों के क्षेत्रों में उत्पाद, पेटेंट का उपबंध नहीं करते हैं, विश्व व्यापार संगठन करार के प्रवृत्त होने, अर्थात् 1 जनवरी, 1995 से भेषजिक और कृषि रसायनों से संबंधित उत्पाद पेटेंट आवेदन प्राप्त करने के साधन उपलब्ध कराना और कतिपय शर्तों की पूर्ति पर, पांच वर्ष या जब तक पेटेंट अनुदत्त न किया जाए, जो भी कम हो, की अवधि के लिए अनन्य विपणन अधिकार प्रदान करना अपेक्षित था।”

“4. चूंकि पेटेंट अधिनियम, 1970 में न तो अन्य बातों के साथ-साथ कृषि रसायन और भेषजिक

क्षेत्रों में उत्पाद पेटेंट अनुदान दिए जाने के लिए उपबंध है न अन्य विपणन अधिकार (अवि०अ०) के अनुदान के लिए, इसलिए अनुच्छेद 70.8 और 70.9 के उपबंध भारत को लागू थे।"

"5. इन बाध्यताओं को आरंभ में 31 दिसम्बर, 1994 को एक अध्यादेश, अर्थात् पेटेंट (संशोधन) अध्यादेश, 1994, जारी करके पूर्ण किया गया था।"

"6. तत्पश्चात्, पेटेंट (संशोधन) विधेयक, 1995 लोक सभा में मार्च, 1995 में पुरःस्थापित किया गया था। विधेयक लोक सभा द्वारा पारित किया गया और फिर, राज्य सभा में पुरःस्थापित किया गया, जहाँ इसे सदन की चयन समिति को निर्दिष्ट कर दिया गया। चूंकि चयन समिति ने, दसवीं लोक सभा के विघटन से पूर्व अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत नहीं की, अतः, विधेयक व्यपगत हो गया।"

"7. करार के अधीन अपनी बाध्यताओं को पूर्ण करने के लिए पेटेंट अधिनियम, 1970 का संशोधन करने के लिए कदम उठाते समय संशोधन में यह सुनिश्चित करने के लिए ऐसे उपाय सम्मिलित किए गए हैं जिनसे लोक हित में हस्तक्षेप करने की सरकार की समर्थता परिरक्षित हो सके। इसके अतिरिक्त, भारत में किए गए आविष्कारों पर निर्बन्धनों को भी हटाए जाने का प्रस्ताव है। लोक अवाणिज्यिक उपयोग, कीमत नियतन और अनिवार्य अनुज्ञापन के रूप में कतिपय रक्षोपायों का उपबंध किए जाने का प्रस्ताव है। इस विधेयक में राष्ट्रीय सुरक्षा के हित में भी कुछ उपाय अंतर्विष्ट हैं। इसमें 26 मार्च, 1995 के पश्चात् दाखिल किए गए आवेदनों को विधिमान्यता देने का भी प्रस्ताव है।"

1.3 पेटेंट (संशोधन) विधेयक, 1998 संसद में लोक सभा द्वारा पारित नहीं किया जा सका, अतः, भारत के राष्ट्रपति ने, विश्व व्यापार संगठन (वि०व्या०सं०)/बौ०सं०अ०व्या०सं०प० करार के उपबंधों को प्रभावी बनाने के लिए, "पेटेंट (संशोधन) अध्यादेश, 1999" प्रख्यापित किया।

1.4 अनादिकाल से प्राप्त किए गए ज्ञान और सामग्री की उपेक्षा नहीं की जा सकती:—पादप उत्पादित मूलक संसाधन राष्ट्रीय ब्यूरो, आई०सी०ए०आर०, नई दिल्ली के भूतपूर्व निदेशक श्री के०एल० मेहरा ने, मेन स्टीम, 7 अक्टूबर, 1995 में प्रकाशित इंडीजीनेस बायोडाइवर्सिटी राइट्स शीर्षक अपने लेख में सारगर्भित रूप से उल्लेख किया है कि पादप जैव भिन्नता, नैसर्गिक अनुनाद पद्धति और कृषक के खेतों/अनुनाद पद्धतियों में होती है। विश्व के विभिन्न भागों में लोगों ने अधिक पादप प्रजातियों को पहचाना, उन्हें संरक्षित किया है उनका चयन किया है और उन्हें उन्नत किया है। यह अविवाद है कि विभिन्न समुदायों के ज्ञान और सामग्री उन्मुक्त रूप से उपलब्ध थी। प्रत्येक अनौपचारिक प्रवर्तक (एक व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह) अपनी खोज को दूसरों के साथ बांटता था। इस प्रकार, इस बात के अभिलेख रखने की आवश्यकता कभी महसूस नहीं हुई थी कि किस व्यक्ति ने क्या खोज की थी। इस प्रकार, ज्ञान के प्रभाजन और सामग्री के उपयोग से लोगों, समुदायों, और राष्ट्रों की आर्थिक समृद्ध होती रहती थी।

1.4.1 हमारे प्राचीन ग्रंथों में मानव जाति की बीमारियों के उपचार के लिए जड़ी बूटियों और औषधीय पादपों की विशेषताएं, प्रयोग और उपयोग अधिकथित हैं। क्या इनके संबंध में, कभी पेटेंट अधिकारों का दावा किया गया है अथवा उनके अध्यधीन रखा गया है।

1.4.2 आधुनिक युग में, अर्थ बाजार में, लाभ का अर्जन एक मात्र लक्ष्य बना लिया गया है और अनौपचारिक प्रवर्तकों के पारंपरिक ज्ञान को चोरी का निशाना बनाकर भी अनेक औपचारिक प्रवर्तक कुछ छोटे-मोटे उपांतरण या संवर्धन करके, उन्हें अपने बौद्धिक सम्पत्ति अधिकारों का छद्मवेश पहना देते हैं। श्री के० एल० मेहरा (पूर्वोक्त) इस बात पर ध्यान नहीं देते हैं कि पादप विज्ञानी ऐसे देशी लोगों से, जिन्होंने लोक प्रयोग पद्धति और अनुकूलन की अनेक पीढ़ियों के माध्यम से ज्ञान संचित किया है, निःशुल्क जानकारी ले देते हैं। जब वे पादप विज्ञानी ऐसे आंकड़े प्रकाशित करते हैं, स्वदेशी ज्ञान/लोक अधिकार क्षेत्र के अंतर्गत आ जाता है और जैव भिन्नता से संभावित कार्य का संवर्धन होता है। औद्योगिक अनुसंधान, ऐसी जानकारी का, अनौपचारिक प्रवर्तकों/समुदायों को कोई भुगतान किए बिना शोषण करते हैं। आधुनिक औषधि और रसायनिक उद्योगों में प्रयुक्त सात हजार से अधिक नैसर्गिक रासायनिक यौगिक सदियों से देशी चिकित्सकों और अन्य लोगों द्वारा प्रयोग में लाए जाते रहे हैं। अन्य कंपनियों ने, प्रायः किसी आदिवासीय समुदाय को ज्ञात पदार्थों के उपयोगी तत्वों का अन्वेषण किया है और उनके सक्रिय सिद्धांतों को अलग करने के पश्चात् उन्होंने अपने उत्पाद

(उत्पादों) का संशोधन किया है अथवा कभी-कभी उसका एक नए सिंथेटिक यौगिक की डिजाइन करने के लिए मुख्य तत्व के रूप में प्रयोग किया है जो साधारण, मूल सारतत्व की अपेक्षा अधिक टिकाऊ या कम विषैला हो सकता है। उन्होंने इस प्रकार के अन्वेषणों के उदाहरण दिए हैं जैसे नीम पर आधारित उत्पाद। जैसे कि बायो पेस्टीसाइड, इथियोपियन इंडोर्ड पायोडलैका डोडेटेट, जो निम्न लागत वाले मोल्यूसिसाइड, इथियोपियन इंडोर्ड पायोडलैका कोडेटेट, जो निम्न लागत वाले मोल्यूसिसाइड और फिमिटिन, जो एक नैसर्गिक माधुर्यवर्धक है, प्रदान करते हैं। देशी लोगों द्वारा खोले गए औषधीय पादपों से प्राप्त औषध मेसजीय और रासायनिक उत्पादों का वार्षिक बाजार मूल्य 43 बिलियन यू० एस० डालर से अधिक था। उक्त लेखक ने, इस बात पर जोर दिया है कि देशी अधिकारों को मान्यता देने और बौद्धिक संपत्ति अधिकार (बौ०सं०अ०) का उपबंध करने के लिए समुचित और प्रभावी विधिकतंत्र का विकास करने तथा अनौपचारिक प्रवर्तकों (व्यक्तियों या समुदायों) को आर्थिक फायदे प्रदान करने की आवश्यकता है।

1.4.3 इन्टरनेट पर "ग्लोबल ट्रेड एंड बायोडाइवर्सिटी इन काम्प्लेक्ट" शीर्षक लेख में यह बताया गया है कि उद्योग में अपनी जैव दृश्यता से घोर अपराध किए हैं। किसान दिल्ली की सड़कों पर जुलूस निकालते रहे हैं कि उनके बासमती चावल पर यू० एस० पेटेंट को समाप्त किया जाए। विकासशील देश अपने देशी औषधीय ज्ञान की चोरी के लिए टी० एन० सी० को न्यायालय ले जा रहे हैं, हरित क्रांति वैज्ञानिक उन बीजों के लिए संघर्षरत हैं जिन्हें वे आस्ट्रेलियन कंपनियों द्वारा प्राइवेट किए जाने से लोगों को बचाने के लिए जिम्मेदार हैं। जीवन के सभी रूपों पर—मानव जीन से लेकर सम्पूर्ण फसल प्रजातियों तक पूर्ण रुपेण पेटेंट के लिए सामूहिक भूख अब विश्व व्यापार प्रणाली का केन्द्र बन गई है। इस लेख में यह भी बताया गया है कि अनेक लेटिन अमेरिकी राष्ट्रों ने यूनिन में शामिल होने के लिए सफलतापूर्वक अभियान चलाया है। हालांकि, ब्राजील अपनी देहली पार करने से पहले बार-बार सोच रहा है जैसा कि वर्क्स पार्टी में बतलाता रहा है कि यदि ब्राजील यू० पी० ओ० वी० में शामिल हो जाता है तो "हमें चिकित नहीं होना चाहिए यदि निकट भविष्य में हमारा लघु कृषक समुदाय संरक्षित चावल की किस्मों का प्रयोग करने के लिए जेल में सड़ जाए।" स्पष्ट है कि यू० पी० ओ० वी० के ब्राजील दल के विरोधी दल के विश्लेषण में यह दिखलाई पड़ता है कि यह अभिसमय कृषकों और राज्यों से निगमों को शक्ति के स्थानांतरण का अग्रदूत है। एक अन्य लेखक, नितोला सी आस्ट्रेटके ने, नीम के वृक्ष पर बौ०सं० अ०व्या० सं० प० के संचात का विश्लेषण करते हुए, इन्टरनेट पर कहा कि नीम का वृक्ष भारत के लिए प्राकृतिक और सांस्कृतिक संसाधन है। नीम की उपयोगिताओं के संबंध में, आर्थिक, विधिक और प्रौद्योगिकी विकास यह संकेत करते हैं कि पादप सामग्री और देशी ज्ञान, किसी प्रतिपूर्ति के बिना, लगातार उपयोग किया जा रहा है। भारतीय अनुसंधान उद्योग विदेशों द्वारा अंतरित किया जा सकता है और कुचला जा सकता है। पारम्परिक कृषि कार्य परित्यक्त हो सकता है। नीम के संबंध में, जैविकीय भिन्नता घट सकती है और सम्पूर्ण बौ० सं० अ० व्या० सं० प० भारतीय लोगों के लिए नीम के सर्वोत्तम प्रबंध में बाधा डाल सकता है। उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला है कि यह परिणाम मात्र बौद्धिक संपत्ति अधिकारों के कारण नहीं है अपितु यह पूंजीवादी आर्थिक प्रणाली का एक परिणाम है जिसमें बौद्धिक सम्पत्ति संरक्षण एक औजार मात्र है।

1.5 देशी समुदायों के फायदों से संबंधित अंतरराष्ट्रीय घोषणाएं:

श्री के० एल० मेहरा (पूर्वोक्त) अंतरराष्ट्रीय घोषणाओं को देशी समुदायों के लिए फायदेमंद नहीं मानते और वे घोषणाएं राष्ट्र राज्यों के संप्रभु अधिकारों को उनके अपने-अपने क्षेत्रों में मान्यता प्रदान करती हैं, जिनके अंतर्गत उनके प्राकृतिक संसाधन और सांस्कृतिक सम्पत्ति भी हैं, वे निम्नवत हैं:—

संयुक्त राष्ट्र साधारण महासभा संकल्प (1962 का संकल्प संख्यांक 1803) यह है:

"यह सुनिश्चित करने के लिए सम्यक् सतर्कता रखनी चाहिए कि राज्य की उसकी प्राकृतिक संपदा और संसाधनों पर संप्रभुता की किसी भी कारण से हानि न हो"

संयुक्त राष्ट्र मानव पर्यावरण सम्मेलन (1972) के सिद्धांत 21 में यह कथन है कि—

"राज्यों को, अपनी निजी पर्यावरण संबंधी नीतियों के अनुसरण में, अपने संसाधनों का शोषण करने का संप्रभु अधिकार है।"

संयुक्त राष्ट्र खाद्य और कृषि संगठन के पादप जेनेटिक संसाधन संबंधी अंतरराष्ट्रीय वचन (सम्मेलन का

संकेत 3/91) और एफ० ए० ओ० का पादप जर्म प्लाज्म संग्रह और अंतरण संबंधी अंतरराष्ट्रीय आचार संहिता (1993) भी यह मानते हैं कि राष्ट्र राज्यों का उनके राज्यक्षेत्रों में पादप जेनेटिक संसाधनों पर संप्रभु अधिकार है।

इंटरनेशनल सोसाइटी आफ एथनोबायोलोजी बेलम की घोषणा (ए० बी० कनिनघम एथिक्स एथनोबायोलोजिकल रिसर्च एंड वायोडाइवर्सिटी डब्लू डब्लू इंटरनेशनल, स्लैड स्विटजरलैंड, 1993) में जोरदार शब्दों में यह कहा गया है कि:

“देशी लोगों को उनकी जानकारी और उनके जैविकीय संसाधनों के उपभोग के लिए प्रतिपूर्ति करने हेतु, प्रक्रियाएं विकसित की जाएं और ऐसे तंत्र स्थापित किए जाएं जिनके द्वारा देशी विशेषज्ञ को उचित प्राधिकारियों के रूप में मान्यता मिले, और ऐसे सभी कार्यक्रमों में, जो उनको, उनके संसाधनों और उनके पर्यावरण को प्रभावित करते हैं, उनसे परामर्श किया जाए।”

विश्व के देशी लोगों के लिए अंतरराष्ट्रीय वर्ष (1993) में बौद्धिक समुदाय के लिए अभूतपूर्व अवसर प्रदान किया कि वे विभिन्न क्षेत्रों में विद्यमान अन्याय की जांच करें और देशी लोगों की सहायता करने में और उनके अधिकारों को महसूस करने में अपनी प्रतिबद्धता प्रदर्शित करें। देशी लोगों के अधिकारों से संबंधित संयुक्त राष्ट्र की प्रारूप घोषणा के अनुच्छेद 29 में यह कहा गया है कि:

“देशी लोग उनकी सांस्कृतिक और बौद्धिक संपत्ति पर पूर्ण स्वामित्व की मान्यता, नियंत्रण और संरक्षण के हकदार हैं। उन्हें अपनी विज्ञान, प्रौद्योगिकी और सांस्कृतिक विरासत, जिसके अंतर्गत मानवीय और अन्य प्रजनन संबंधी संसाधन बीज, औषधी, फल-फूल और वनस्पतियों का ज्ञान, परम्परागत ज्ञान, साहित्य, डिजाइन और दृश्य तथा अभिनय कलाएं भी हैं, का नियंत्रण करने, उन्हें विकसित करने और उनका संरक्षण करने के विशेष उपायों का अधिकार है।”

प्रत्येक राष्ट्र को अब अपने राष्ट्रीय संसाधनों और आस्तियों को, मूर्त और अमूर्त दोनों, को नियंत्रित करने और प्रयोग करने का अधिकार और स्थापित करने की अधिकारिता है और यदि वह चाहता है तो आर्थिक फायदे उन लोगों/समुदायों के साथ प्रभाजित कर सकता है जिनके पास पारम्परिक अधिकार थे। अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन का 169वां अभिसमय का अनुच्छेद 15, जो देशी लोगों के संबंध में है, यह अपेक्षा करता है कि राष्ट्र/राज्य देशी भूमि पर प्राकृतिक संसाधनों का शोषण करने के (प्रस्तावों) पर विचार करते समय, उनसे परामर्श करें, “इन संसाधनों का उपयोग, प्रबंध और संरक्षण करने में भाग लेने के” देशी लोगों के अधिकार का सम्मान करें और यह सुनिश्चित करें कि देशी लोगों को “जहां संभव हो” शोषण के फायदों में से भाग मिले। जैविकीय भिन्नता संबंधी अभिसमय (यू०एन०ई०पी० कन्वेंशन आन बायोलोजिकल डाइवर्सिटी नरोबी, कीनिया 1992) में भी इस सिद्धांत की (अनुच्छेद 3, 8, 15 में) यह कहते हुए पुष्टि की गई है कि:

“प्रत्येक संबद्ध पक्षकार, यथासंभव, और जैसा उचित हो, राष्ट्रीय विधान के अधधीन, बायोलोजिकल डाइवर्सिटी के संरक्षण और संपोषणीय उपयोग के लिए उन देशी और स्थानीय समुदायों के, जिनकी पारम्परिक जीवन शैली में वे अंतर्निहित हैं, ज्ञान, अन्वेषण और प्रक्रियाओं का सम्मान करेगा, संरक्षण करेगा और उन्हें बनाए रखेगा तथा ऐसे ज्ञान, अन्वेषणों और प्रक्रियाओं के धारकों के अनुमोदन और अंतर्वेशन से उनके व्यापक उपयोग का संवर्धन करेगा और ऐसे ज्ञान, अन्वेषणों और प्रक्रियाओं के उपभोग से होने वाले फायदों को समान रूप से प्रभाजित करने को प्रोत्साहन देगा।”

1.6 सभी के लिए सांविधानिक निदेश और स्वास्थ्य संबंधी न्यायशास्त्र:—

न्यायमूर्ति वी० आर० कृष्णअय्यर ने, अपने लेख “पार्ट वन-टू पेरिस विध टियर्स: दि नेशनल फार्मास्यूटिकल एंड दि ज्युरिसप्रूडेंस आफ हेल्थ फार आल” शीर्षक अपने लेख में, जो पेटेंट विधि संबंधी राष्ट्रीय कार्यदल द्वारा प्रकाशित पुस्तक “कांक्वेस्ट वाई पेटेंट: आन पेटेंट ला एंड पालिसी” में सम्मिलित है, यह कहा है कि सामाजिक न्याय, भारतीय संविधान की उद्देशिका में किया गया विस्तृत वायदा है। “सामाजिक न्याय” शब्द, इसके अंतर्गत वैधिय, चाहे कोई भी हो, में उसका मानवीय तत्व, जीवन का अधिकार प्रत्येक व्यक्ति के लिए निहित है जिसमें जीवन स्तर में असमानता का आधारभूत समाधान और क्रमिक विलोपन भी है। स्वास्थ्य के

बिना जीवन कुछ भी नहीं है। स्लाईनोजा ने कहा है कि किसी भद्र पुरुष के लिए पहली अपेक्षा एक स्वस्थ प्राणी होना है और पीड़ापूर्ण अस्तित्व, निजीव होकर जीते रहना, पूर्णतः जीवन शून्य बने रहना है। न्यायमूर्ति अय्यर का विचार है कि राज्य “चिकित्सीय देखरेख” और “चिकित्सा प्राप्ति” का अधिकार इस तरह लोकतांत्रिक बनाए कि वह पिछड़े वर्ग, देशी और निम्नतम वर्ग के, भारतीय मानवों में उनके अंतिम व्यक्ति तक की पहुंच के भीतर हो। यह समानता भ्रातृत्व और न्याय का उद्देशिकापूर्ण आदेश है। भ्रातृत्व क्या है? यदि किसी की औषधि के बिना बीमारी के कारण मृत्यु हो जाती है जबकि दूसरों के मन में उनके प्रति सहयोग की भावना और पर्याप्त सहानुभूति न हो कि वे उसकी धन अथवा औषधि से प्राण रक्षा करने का प्रयास करें। न्याय, अच्छे स्वास्थ्य की दृष्टि से क्या है यदि निर्धन व्यक्ति उपचार के बिना गंभीर रोगों से पीड़ित हैं जबकि समृद्ध व्यक्ति इस संघर्ष में अपने साधनों के बल पर विजयी हो जाते हैं। उपचार योग्य रोगियों के मध्य “स्वास्थ्य की समानता” क्या है? यदि अभागे रोगी इस कारण मर जाते हैं कि राज्य उन्हें कम लागत और शीघ्र पहुंच के भीतर दवाएं प्रदान नहीं कर पाता जबकि समृद्ध व्यक्ति कीमती नुस्खों के माध्यमों से, जिन्हें वे वहन कर सकते हैं और जो उनकी पहुंच के भीतर है, स्वास्थ्य खरीद लेते हैं। अपरिहार्य निष्कर्ष यह है कि राज्य व्यावहारिक आपूर्ति और वास्तविक कीमत तथा स्थान पर पहुंचने की पद्धति द्वारा आवश्यक औषधियों की पहुंच सुनिश्चित करने के लिए पूर्ण प्रयत्न नहीं करता है तो उपचार योग्य बीमारी से ग्रसित व्यक्ति समाप्त हो जाएगा अथवा भूखों मरेगा।

1.6.1 यद्यपि, संविधान का अनुच्छेद 21 मात्र यह आदेश देता है कि राज्य “विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही, अन्यथा नहीं” किसी व्यक्ति को उसके प्राण या स्वतंत्रता से वंचित नहीं करेगा किंतु इस उपबंध के गहन मानवतावाद की विभिन्न मामलों में गतिशील न्यायिक प्रक्रिया द्वारा जांच की गई है। उदाहरण के लिए ओल्गा टेलिस केस—ए०आई०आर० 1996 एस०सी० 180 में यह संप्रेक्षण किया गया था कि:—

“जीवन के अधिकार की विषय वस्तु से जीवित रहने के अधिकार को अपवर्जित करना विशुद्ध पांडित्य प्रदर्शन मात्र होगा।”

1.6.2. न्यायमूर्ति अय्यर ने कहा है कि यदि “जीवित रहना जीवन का एक भाग है” तो रोग से मुक्ति जीवन का एक महत्वपूर्ण भाग है। इस प्रकार, स्वस्थ रहने का अधिकार, जीवन के व्यापक अधिकार के अंतर्गत ही आता है, विशेष रूप से तब जब उसे लोकतांत्रिक समाजवादी गणतंत्र में प्रदत्त सामाजिक न्याय, समानता और वैसी ही गांटी के संदर्भ में पढ़ा जाए। उन्होंने कल्पना की है कि ऐसे व्यक्ति जो गंभीर रूप से रुग्ण हैं किंतु यदि जीवन रक्षक औषधि उसे समय से दे दी जाए तो ठीक हो सकता है किंतु यदि चिकित्सा उसके लिए काल्पनिक भ्रममात्र है, यदि औषधियां उसकी क्रय क्षमता से परे हैं तो उसे जीवित रहने का दुःखदायी अधिकार ही मिल पाता है। इसी प्रकार, अनुच्छेद 39 में दिए गए राज्य की नीति के निदेशक तत्व यह व्यवस्था करते हैं कि कर्मचारों, पुरुषों और स्त्रियों दोनों, का स्वास्थ्य और शक्ति सुनिश्चित की जाए और अनुच्छेद 47 के अधीन यह उपबंध है कि लोगों का पोषाहार स्तर और लोक स्वास्थ्य का सुधार किया जाएगा। ये अनुच्छेद समाज के कमजोर वर्गों की शारीरिक भलाई के लिए गहरी चिंता प्रदर्शित करते हैं। विसेंट बनाम भारत संघ, ए०आई०आर० 1987 एस०सी० 990 में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि लोक स्वास्थ्य में सुधार के अतिरिक्त, अपने लोगों के पोषाहार का स्तर और जीवन स्तर बढ़ाना राज्य का प्राथमिक कर्तव्य है और सर्वोच्च प्राथमिकता का, संभवतः शीर्षस्थ प्राथमिकता का विषय है। सी०ई०आर०सी० बनाम भारत संघ 1995(1) स्केल 354, पैरा 24 में यह बताया गया है कि “जीवन का व्यापक अर्थ है और इसमें जीवित रहने तथा जीवन के बेहतर मानदंड का अधिकार सम्मिलित है”। अनुच्छेद 21 को, राज्य के नीति के निदेशक तत्वों से ही जीवन और सांस मिलती है।

1.6.3. न्यायमूर्ति अय्यर का कहना है कि विधि और नीति को जीवन रक्षा के लक्ष्य की ओर ले जाया जाए तथा अनिवार्य औषधियां निर्धन और निरक्षर भाग्यहीन व्यक्तियों की पहुंच के भीतर लाई जाएं। केवल औषधियां ही बीमारियां दूर करती हैं। अतः यदि राज्य जीवन के साथ खिलवाड़ करने लगता है और वह चिकित्साओं को उपलब्ध करने में अपनी कलंकित नीतियों के कारण असफल रहता है अथवा उनका बाजार मूल्य उस सीमा तक बढ़ने देता है जिससे कि ये क्रय करने के लिए जनसामान्य के साधनों के परे पहुंच जाएं। राज्य, जिसके पास औषधि की कीमत का नियंत्रण करने और उसकी आपूर्ति का विनियमन करने की शक्ति है, विधायी भेषजीय उदारता अथवा लेसीज फेयर द्वारा लाभ के भूखे बड़े-बड़े निगमों के पक्ष में करोड़ों निर्धन व्यक्तियों

के जीवन का बलिदान कर सकता है और अनिवार्य औषधियों पर उचित निष्पक्ष और ठीक विचार किए बिना, कीमत नियत करने की ऐसी प्रक्रिया, जो बाजार में जानबूझकर छलछिद्र करने वाले कारपोरेट, विशेष रूप से राष्ट्र-पार विनिर्माता, द्वारा भारतीयों की पहुंच के परे नियत की जाती है, एक असंवैधानिक कार्य है।

1.6.4 पूर्वोक्त प्रकाशित पुस्तक में, न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने, अपने परवर्ती "पार्ट 2—दि पेरिस कन्वेंशन: ए कॉन्स्टिट्यूशनल डायलेक्टिकल क्रिटिक" शीर्षक लेख में कहा है कि पेटेंट विधि के पुनरीक्षण से संबंधित न्यायमूर्ति अयंगर की रिपोर्ट ने, विनिर्दिष्ट प्रक्रियाओं के लिए पेटेंट सीमित करने के मामले को स्थापित किया है, किन्तु आमतौर पर उत्पादों के लिए नहीं। इस तरह, उसी उत्पाद तक पहुंच के लिए सृजक बुद्धिमानों द्वारा अपनाई गई देशी पद्धतियाँ और युक्तियाँ लोक कल्याण के लिए जीवित रखी गई हैं। न्यायमूर्ति अय्यर का विचार है कि खाद्य पदार्थ और औषधियाँ, पेटेंट के योग्य आविष्कार नहीं हैं। उनके द्वारा व्यक्त आशंकाएं एम०एन०सी० द्वारा पेट की गई औषधियाँ, जाली टानिक और ब्रांड रैकिट हैं। और, शानदार अतिशयोक्तिपूर्ण प्रचार के माध्यम से, मनोप्रभावी चापलूसी द्वारा लोगों को लुटती हैं। एक अन्य लेखक सुनेन्द्र जे० पटेल ने भी "भारतीय पेटेंट अधिनियम, 1970 और विश्व पेटेंट पद्धति का पुनरीक्षण और पेरिस कन्वेंशन" शीर्षक अपने लेख में, जो पूर्वोक्त प्रकाशित पुस्तक में है, यह कहा है कि पेटेंट लेने वालों को अनुदत्त एकाधिकारिक सुविधाएं पेटेंट अनुदत्त करने वाले देशों पर भारी लागत का बोझ बढ़ा देती हैं। इसी प्रकार, उक्त पुस्तक में भी प्रकाशित "प्रौद्योगिकीय आविष्कार, आत्मविश्वास और पेटेंट संरक्षण भारतीय संदर्भ और पेरिस कन्वेंशन" शीर्षक अपने लेख में, निम्नलिखित शब्दों में अपनी आशंकाएं व्यक्त की हैं:

"यदि भारतीय पेटेंट अधिनियम में कोई परिवर्तन होता है तो जनता को आयात के माध्यम से प्रचुर राशि का भुगतान करना होगा और उत्पाद तैयार करने के लिए तथा एकाधिकार को भंग करने के लिए किसी अन्य विनिर्माता के लिए काफी लंबी अवधि तक प्रतीक्षा करनी होगी। पेटेंट लेने वालों के लिए, किसी नियत समय के भीतर, पेटेंट पर कार्य करना भी आज्ञापक नहीं रह जाएगा और इस प्रकार, किसी उत्पाद का पेटेंट प्राप्त करने का ऐसी औषधि के तैयार करने में, जिसकी लोगों द्वारा बहुत ज्यादा जरूरत पड़ सकती है, लगे बिना संभावित प्रतियोगियों को रोकने के लिए प्रयोग की जा सकती है। किन्तु इसका निर्माण असर्वाधिक लाभ के साथ नहीं जोड़ा जा सकता। कहने की आवश्यकता नहीं कि वे राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रमों के लिए अपेक्षित औषधियों और आवश्यक औषधियाँ होंगी जिनकी सबसे अधिक उपेक्षा की जाएगी।"

1.6.5 और उक्त आशंका स्पष्टतः सच होती जा रही है जब कोई कैमिस्ट से स्टैंडर्ड ब्रांड की एंटीबायोटिक खरीदता है तो उसे कोर्स को पूरा करने के लिए एंटीबायोटिक टेब्लेट के लिए भारी रकम अदा करनी पड़ती है। ऐसी एंटीबायोटिक की कीमतों की वृद्धि में अचानक तेजी आई है।

पूर्वोक्त पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए, हम आगामी अध्याय में विश्लेषण करेंगे और अपनी सिफारिशों को अंतिम रूप देंगे।

अध्याय 2

निष्कर्ष और सिफारिशें

2.1 सिफारिश सं० 1:— मूल अधिनियम की धारा 5 का संशोधन

धारा 5 अन्य बातों के साथ यह उपबंध करती है कि ऐसे पदार्थों के विषय में, जो खाद्य के रूप में अथवा औषध या औषधि के रूप में उपयोग के लिए अशयित है, या उपयोग में लाए जाने योग्य है, की दशा में, "स्वयं उन पदार्थों के दावों" की बाबत पेटेंट अनुदत्त नहीं किया जाएगा, किन्तु विनिर्माण के ढंग या प्रक्रिया के दावे पेटेंट योग्य होंगे। दूसरे शब्दों में, अधिनियम में उत्पाद के पेटेंट को नहीं माना गया किन्तु प्रक्रिया के पेटेंट को ही मान्यता दी गई। अब, पेटेंट (संशोधन) विधेयक, 1998 (जो दिसम्बर, 1998 में राज्य सभा में पुरःस्थापित 1998 का विधेयक संख्यांक 64) के फलस्वरूप, विद्यमान धारा, उपधारा (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित किए जाने और एक नई उपधारा, जो उपधारा (2) के रूप में संख्यांकित है, यह उपबंध करने के लिए पुरःस्थापित किए जाने हेतु प्रस्तावित है कि औषधि और औषध की बाबत उत्पाद पेटेंट किया जाए। ऐसा कोई उपयोजन, अध्याय 4क में उपबंधित रीति से निपटारा जाना है। तदनुसार, एक नया अध्याय 4क "अनन्य विपणन अधिकार" पुरःस्थापित किए जाने की वांछा की गई है। विधेयक में धारा 39 को हटाए जाने और एक नई धारा — उपधारा 157क अंतःस्थापित किए जाने का भी उपबंध है।

2.1.1 विधेयक के साथ उपाबद्ध उद्देश्यों और कारणों के कथन में यह कहा गया है कि बौ० सं०अ० व्या०क० करार के अनुच्छेद 70.8 और 70.9 यह अपेक्षा करते हैं कि उनके अधीन अनुज्ञात संधिकाल के होते हुए भी, ऐसे सदस्य देशों को, जो कृषि, रसायन और भेषजिक क्षेत्रों में उत्पाद पेटेंट के लिए उपबंध नहीं करते हैं, विश्व व्यापार संगठन करार के प्रवर्तन में आने की तारीख से (अर्थात् 1 जनवरी, 1995 से) भेषजिक और कृषि रसायनों के लिए उत्पाद पेटेंट आवेदन प्राप्त करने के एक साधन की व्यवस्था करनी चाहिए और कतिपय शर्तों के पूरा हो जाने पर, पांच वर्ष की अवधि के लिए या जब तक कि पेटेंट अनुदत्त नहीं किया जाता या रद्द नहीं किया जाता, इनमें से जो भी कम हो, अनन्य विपणन अधिकार अनुदत्त किए जाने चाहिए। यह कहा गया है कि उक्त विधेयक, उक्त बाध्यताओं को पूरा करने के लिए पुरःस्थापित किया जा रहा था। वास्तव में, ऐसे ही उपबंध 21 दिसम्बर, 1994 को जारी किए गए, पेटेंट (संशोधन) अध्यादेश, 1994 में अंतर्विष्ट है किन्तु यह संविधान के अनुच्छेद 123 के अनुसार, व्यपगत हो गया था। तत्पश्चात् — उद्देश्यों और कारणों के कथन में यह स्पष्ट किया गया है कि — पेटेंट (संशोधन) विधेयक, 1995 मार्च, 1996 में लोक सभा में पुरःस्थापित किया गया था और वह लोक सभा द्वारा पारित भी किया गया था किन्तु राज्य सभा द्वारा इसे पारित किया जा सकता, उसके पूर्व दसवीं लोक सभा विघटित हो गई थी। उद्देश्यों और कारणों के कथन में संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा उठाए गए विवाद पर विश्व व्यापार संगठन के अपीलीय निकाय की सिफारिश का भी निर्देश है जिसके अधीन भारत 19 अप्रैल, 1999 तक ऐसे उपबंध करने के लिए आबद्ध है।

2.1.2 विश्व व्यापार संगठन अकाई में की गई प्रतिबद्धताओं को देखते हुए, भारत का विधि आयोग एक बात से सहमत है कि प्रस्तावित उपधारा (2) जैसा एक उपबंध आवश्यक है किन्तु साथ ही इस बात का कोई कारण प्रतीत नहीं होता है कि भारत को, बौ०सं०अ० व्या०क० विशेष करार में अनुज्ञात छूटों का लाभ क्यों नहीं लेना चाहिए और उन्हें क्यों न शामिल किया जाना चाहिए। संक्षेप में, अनुच्छेद 27(2) सदस्यों को पेटेंट योग्य अन्वेषणों से अपवर्जन अनुज्ञात करता है, जिसका वाणिज्यिक शोषण लाभ व्यवस्था अथवा नैतिकता के संरक्षण के लिए, जिसमें मानव, जीव जंतु, या पादप जीवन या स्वास्थ्य का संरक्षण भी है, अथवा पर्यावरण के प्रति गंभीर पूर्वाग्रह से संरक्षण प्रदान करना भी है। इसी प्रकार, अनुच्छेद 27 के उपअनुच्छेद (3) का खंड (क) सदस्यों को मानवों या जीवजंतुओं के उपचार के लिए नैदानिक चिकित्सीय या शल्य पद्धतियों के पेटेंट योग्य होने के अपवर्जन के लिए समर्थ बनाता है। इसी प्रकार, उक्त उप अनुच्छेद का खंड (ख) पुनः सदस्यों को पादपों और सूक्ष्म जीवों से भिन्न पशु पक्षियों तथा पादपों और जीव जंतुओं के प्रजनन के लिए, अजैविकीय

और सूक्ष्म जैविकीय प्रक्रियाओं से भिन्न अनिवार्यतः, जैविकीय प्रक्रियाओं के पेटेंट योग्य होने से अपवर्जन के लिए समर्थ बनाता है। सुलभ उद्धरण के लिए संपूर्ण अनुच्छेद 27 को अधिकथित करना समुचित होगा।

“अनुच्छेद 27

पेटेंट योग्य विषय-वस्तु

(1) पैरा 2 और 3 के उपबंधों के अधीन रखते हुए, प्रौद्योगिकी के सभी क्षेत्रों में किन्हीं अन्वेषणों के लिए, चाहे उत्पाद हो या प्रक्रियाएं, पेटेंट उपलब्ध होगा, परंतु वह तब जब कि वे नूतन हैं, उनमें अन्वेषणपूर्ण प्रक्रम अन्तर्गुह्य है और वे औद्योगिक उपयोग के लिए सक्षम हैं। अनुच्छेद 65 के पैरा 4, अनुच्छेद 70 के पैरा 3 और अनुच्छेद के पैरा 3 के अधीन रहते हुए, पेटेंट उपलब्ध होंगे और पेटेंट-अधिकार अन्वेषण के स्थान, प्रौद्योगिकी के क्षेत्र और उत्पाद निर्यात किए जाते हैं अथवा स्थानीय रूप से उत्पादित किए जाते हैं, के संबंध में, किसी विभेद के बिना, उपभोग्य होंगे।

(2) सदस्य ऐसे पेटेंट योग्य अन्वेषणों का अपने राज्य क्षेत्र के भीतर निवारण और अपवर्जन कर सकते हैं जिनका वाणिज्यिक शोषण, लोक व्यवस्था अथवा नैतिकता के संरक्षण के लिए, जिसमें मानव, जीव जंतु, पादप जीवन या स्वास्थ्य का संरक्षण भी है, अथवा पर्यावरण के प्रति गंभीर पूर्वाग्रह से संरक्षण करना आवश्यक है।

परन्तु ऐसा अपवर्जन मात्र इस कारण नहीं किया जाता है कि शोषण उनकी विधि द्वारा प्रतिषिद्ध है।

(3) सदस्य निम्नलिखित का भी पेटेंट योग्य होने से अपवर्जन कर सकते हैं।

(क) मानवों या जीव जंतुओं के उपचार के लिए वैज्ञानिक, चिकित्सीय या शल्यक पद्धतियां;

(ख) पादप और सूक्ष्म जीवों से भिन्न जीव जंतु और अजैविकीय और सूक्ष्म जैविकीय प्रक्रियाओं से भिन्न पादपों या जीव जंतुओं के प्रजनन के लिए अनिवार्य जैविकीय प्रक्रियाएं। तथापि, वयस्य पेटेंट द्वारा या किसी प्रभावी स्वी जेनेरिस पद्धति द्वारा या उनके किसी संयोजन द्वारा, पादप उपजातियों के संरक्षण के लिए उपबंध करेंगे। इस उपपैरा के उपबंधों का, विश्व व्यापार संगठन करार के प्रवर्तन की तारीख के चार वर्ष पश्चात् पुनर्विलोकन किया जाएगा।

2.1.3 ऐसा कोई कारण नहीं कि प्रस्तावित विधेयक में, उक्त अनुच्छेद के पूर्वोक्त उपबंधों के अनुसार कतिपय उपबंध नहीं होने चाहिए। तदनुसार, विधि आयोग यह सिफारिश करता है उपधारा (2) के अंत में, निम्नलिखित आशय का एक परंतुक और एक स्पष्टीकरण जोड़ा जाए:

“परन्तु यह कि इस उपधारा के अधीन (क) मानवों या जीव जंतुओं के उपचार के लिए, नैदानिक, चिकित्सीय और शल्यक पद्धतियों की बाबत और (ख) ऐसे आविष्कारों को, वाणिज्यिक शोषण के निवारण के लिए, जो लोक व्यवस्था या नैतिकता, जिसमें मानव, जीव-जंतु या पादप जीवन या स्वास्थ्य या नैतिकता का संरक्षण भी है, अथवा पर्यावरण के प्रति गंभीर पूर्वाग्रह से संरक्षण करना आवश्यक है, कोई पेटेंट अनुदत्त नहीं किया जाएगा।

स्पष्टीकरण: इस उपधारा में पदार्थ के अंतर्गत सूक्ष्म जीवों से भिन्न पदार्थ या जीव जंतु या उसका कोई भाग सम्मिलित नहीं होगा।”

2.1.4. विधि आयोग की यह राय है कि पूर्वोक्त उपबंध आवश्यक हैं क्योंकि मूल अधिनियम (पेटेंट अधिनियम 1970) की धारा 2 के खंड (1) में “औषधि या औषध” की परिभाषा के साथ पठित धारा 3 के विद्यमान उपबंध बोसंअं व्यासंअं करार के अनुच्छेद 27 के पूर्वोक्त उपबंधों के अनुसार और यथाअनुज्ञात पेटेंट योग्य होने के अपवादों के लिए उपबंध नहीं है।

2.2. सिफारिश सं० 2:— प्रस्तावित अध्याय 4क में धारा 24क का संशोधन

8 जनवरी, 1999 को जारी किए गए पेटेंट (संशोधन) अध्यादेश, 1999 में, जो 1999 का अध्यादेश संख्यांक 3 है, निम्नलिखित आशय का स्पष्टीकरण अंतर्विष्ट है:

“स्पष्टीकरण: यह स्पष्ट किया जाता है कि इस धारा के प्रयोजन के लिए, इस धारा के अधीन किसी

वस्तु या पदार्थ का विक्रय या वितरण करने के अधिकार में, भारतीय आयुर्विज्ञान केन्द्रीय परिषद् अधिनियम, 1970 की धारा 2 की उपधारा (1) के खंड (ड) में यथापरिभाषित भारतीय आयुर्विज्ञान पद्धति पर आधारित कोई वस्तु या पदार्थ सम्मिलित नहीं होगा और ऐसी वस्तु या पदार्थ पहले से ही लोक अधिकार क्षेत्र के अंतर्गत है।”

2.2.1 यद्यपि, उक्त स्पष्टीकरण को राज्य सभा में पुरःस्थापित विधेयक (1998 का 64) में स्थान नहीं दिया गया, फिर भी, राज्य सभा में जोड़ दिया गया है। तथापि, विधि आयोग की यह राय है कि भारतीय आयुर्विज्ञान केन्द्रीय परिषद् अधिनियम, 1970 की धारा 2 के खंड (ड) में अंतर्विष्ट “भारतीय आयुर्विज्ञान” पद की परिभाषा में देशी औषधि या व्यवसाय नहीं है। ग्रामीण और आदिवासी समुदायों के मध्य अभी भी प्रचलित अपनी पारम्परिक जानकारी और व्यवसाय का ईएमआर के अंतर्गत आने से रक्षा करना आवश्यक है। तदनुसार, यह सिफारिश की जाती है कि धारा 24क (1) का स्पष्टीकरण निम्नवत रूप से संशोधित किया जाए:—

स्पष्टीकरण:—यह स्पष्ट किया जाता है कि इस धारा के प्रयोजन के लिए, इस धारा के अधीन किसी वस्तु या पदार्थ के विक्रय या वितरण के अनन्य अधिकार में, (क) भारतीय आयुर्विज्ञान केन्द्रीय परिषद् अधिनियम, 1970 की धारा 2 की उपधारा (1) के खंड (ड) में यथापरिभाषित भारतीय आयुर्विज्ञान पद्धति पर आधारित कोई वस्तु या पदार्थ यदि ऐसी वस्तु या पदार्थ पहले से ही लोक व्यापार है या उपचार के लिए देशी रूप से प्रयुक्त या प्रयोग किए जाने के लिए कोई वस्तु या पदार्थ सम्मिलित नहीं होगी।” मोटे शब्द वे हैं जिन्हें जोड़ने का सुझाव दिया गया है।

2.3 सिफारिश सं० 3:— मूल अधिनियम की धारा 39 का और अन्य धाराओं में उसके निर्देश का हटाया जाना:

अधिनियम की धारा 39 और संशोधनकारी विधेयक की धारा 4, 5, 6 और 7 में यथाप्रस्तावित धारा 40, 64 और 118 में उसकी अपेक्षा के पारिणामिक निर्देश को हटाने के लिए कोई अच्छा कारण नहीं प्रतीत होता है। प्रथमतः, बोसंअं व्यासंअं करार के अनुच्छेद 70.8 और 70.9 में हमारे देश से ऐसा करने की अपेक्षा नहीं की गई है। उक्त उपबंध, उक्त अनुच्छेदों द्वारा उपबंधित संक्रमणकालीन व्यवस्थाओं के प्रभावी अनुपालन के मार्ग में भी नहीं आता है। द्वितीयतः, यह भी नहीं कहा जा सकता कि वह प्रयोजन, जिसके लिए धारा 39 अधिनियम में पुरःस्थापित की गई थी, अब पूर्णतः, असंगत हो गया है। धारा 39 यह उपबंध करता है कि भारतीय निवासी किसी आविष्कार के पेटेंट के अनुदत्त किए जाने के लिए भारत के बाहर, नियंत्रक द्वारा या उसकी ओर से अनुदत्त किसी लिखित अनुज्ञा के प्राधिकार के सिवाय तब तक आवेदन नहीं करेगा या कराएगा (ऐसी लिखित अनुज्ञा, नियंत्रक द्वारा केन्द्रीय सरकार की पूर्व सम्मति पर ही अनुदत्त की जा सकती है), जब तक कि (1) उसी आविष्कार के पेटेंट के लिए भारत में आवेदन, भारत के बाहर दिए गए आवेदन के कम से कम छह सप्ताह पूर्व नहीं कर दिया गया है तथा भारत में उस आवेदन के संबंध में, धारा 35 की उपधारा (1) के अधीन या तो कोई निदेश दिए गए हैं या ऐसे सभी निदेश प्रतिसंदूत किए गए हैं। धारा 35 (1) यह उपबंध करती है कि जहां इस अधिनियम के प्रारंभ से पूर्व, या उसके पश्चात् पेटेंट के लिए किए गए आवेदन की बाबत नियंत्रक को यह प्रतीत होता है कि आविष्कार उस वर्ग का है जिसका रक्षा के प्रयोजनों के लिए सुसंगत होना केन्द्रीय सरकार द्वारा अधिसूचित किया गया है या जहां आविष्कार उसको अन्यथा इस प्रकार सुसंगत प्रतीत होता है या (2) जहां ऐसे आविष्कार के संबंध में संरक्षण के लिए आवेदन, भारत से बाहर निवास करने वाले किसी व्यक्ति द्वारा भारत से बाहर किसी देश में पहले ही फाइल किया जा चुका है वहां वह उस आविष्कार की बाबत जानकारी के प्रकाशन का, या विदेशों में विनिर्दिष्ट किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के वर्ग को ऐसी जानकारी सूचित किए जाने का प्रतिषेध या निर्बंधन करने के लिए निर्देश दे सकेगा।

2.3.1 इस प्रकार यह प्रतीत होता कि यद्यपि, धारा 39 हमारे देश के राष्ट्रीय हित का संरक्षण और संवर्धन करने के लिए परिकल्पित की गई है, फिर भी, यह अनावश्यक रूप से कठोर शब्दों में विरचित की गई है। यह उपबंध करना सर्वाधिक उपयुक्त और उचित होगा कि यदि नियंत्रक, छह सप्ताह के भीतर, लिखित रूप में संसूचित नहीं करता है कि उसने पेटेंट के लिए आवेदक के आवेदन पर धारा 35(1) के अधीन निदेश जारी कर दिए हैं तो आवेदक भारत से बाहर अन्यत्र पेटेंट के लिए आवेदन करने के लिए स्वतंत्र होगा। तदनुसार,

यह सिफारिश की जाती है कि धारा 39 (क) की उपधारा (1) में "नियंत्रक द्वारा या उसकी ओर से अनुदत्त किसी लिखित अनुज्ञा के प्राधिकार के अधीन के सिवाय" शब्दों का लोप करके संशोधन किया जाए और उपधारा (1) के खंड (ख) के स्थान पर यह प्रतिस्थापित किया जाए कि "भारत में उस आवेदन के संबंध में, धारा 35 की उपधारा (1) के अधीन, छह सप्ताह की उक्त अवधि के भीतर कोई निर्देश दिए गए हैं धारा 39 की उपधारा (1) के मुख्य भाग में पूर्वोक्त शब्दों के लोप को देखते हुए, उसकी उपधारा (2) का अनिवार्यतः लोप किया जाना होगा।

2.4 सिफारिश सं० 4: मूल अधिनियम की धारा 64 का संशोधन

धारा 64 का संशोधन करना भी आवश्यक है जो कतिपय विनिर्दिष्ट आधारों पर पेटेंटों के प्रतिसंहरण के लिए उपबंध करती है। हमारे राज्य हित के संरक्षण के लिए प्रतिसंहरण के एक अतिरिक्त आधार का उपबंध करना आवश्यक है। तदनुसार, यह सिफारिश की जाती है कि धारा 66 की उपधारा (1) में खंड (ग) के पश्चात्, निम्नलिखित खंड अंतःस्थापित किया जाएगा।

"(त) कि अनुदत्त पेटेंट राज्य की सुरक्षा पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाला है या वह इस अधिनियम के उपबंधों के उल्लंघन में अनुदत्त किया गया है।"

2.4.1 प्रतिसंहरण का ऐसा एक अतिरिक्त आधार आवेदन में यह सुनिश्चित करने के लिए निहित हित के सृजन के लिए आवश्यक है कि पेटेंट उसको विधि के सम्यक् अनुपालन में अनुदत्त किया गया है। इससे यह सुनिश्चित होगा कि आवेदक पेटेंट अभिप्राप्त करने के लिए कपटपूर्ण व्यवहारों में नहीं लगेंगे।

2.5 सिफारिश सं० 5: मूल अधिनियम की धारा 134 का संशोधन

धारा 134 अधिनियम के अध्याय 22 के अंतर्गत आती है जो "अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्थाओं" के संबंध में है। धारा 34 सीधी सादी भाषा में लिखी गई है।

वह निम्नवत् है:

134. पारस्परिकता के लिए उपबंध करने वाले देशों के बारे में अधिसूचना: जहां केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त राजपत्र में अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट कोई देश पेटेंटों के अनुदान और पेटेंट अधिकारों के संरक्षण की बाबत भारत के नागरिकों को वही अधिकार नहीं देता है जो वह अपने राष्ट्रिकों को देता है वहां ऐसे देश का कोई भी राष्ट्रिक, अकेले ही या संयुक्ततः किसी अन्य व्यक्ति के साथ,—

(क) पेटेंट के अनुदान के लिए आवेदन करने का या पेटेंट के स्वत्वधारी के रूप में रजिस्ट्रीकृत किए जाने का;

(ख) पेटेंट के स्वत्वधारी के समनुदेशिनी के रूप में रजिस्ट्रीकृत किए जाने का; या

(ग) इस अधिनियम के अधीन अनुदत्त पेटेंट के अधीन किसी अनुज्ञप्ति के लिए आवेदन करने का या उसे धारण करने का,

हकदार नहीं होगा।

2.3.1 इस उपबंध के पीछे उद्देश्य और कारण, जैसा विधेयक में बताया गया था, पारस्परिकता की संकल्पना थी। उक्त कथन के अनुसार, यदि कोई देश भारतीय नागरिकों को वे अधिकार देने से इंकार करता है जो वह अपने राष्ट्रिकों को देता है तो भारत भी उस देश के नागरिकों को, भारत में पेटेंट आदि के आवेदन करने का अधिकार नहीं देगा।

धारा 134 अभिव्यक्त रूप से नकारात्मक पारस्परिकता के लिए उपबंध करती है और वह हमारी राष्ट्रीय गरिमा और सम्मान के साथ पूर्णतः संगत है। किन्तु हाल ही में अनेक ऐसी घटनाएं हुई हैं जहां कतिपय उन्नत देशों ने, हमें "दोहरे उपयोग" की संभाव्यता के विशिष्ट आधार पर प्रौद्योगिकी तक पहुंच से इंकार किया है। ऐसे इंकार किए जाने की संख्या में मई, 1998 से मुख्यतः वृद्धि हुई है। विभेदकारी इंकारी पर हमारे विरोधों का कोई प्रभाव नहीं हुआ है। ऐसी इंकारियां हमारी सुरक्षा और प्रौद्योगिकीय विकास को गंभीर रूप से प्रभावित कर रही हैं। इस बात पर ध्यान दिया जाना महत्वपूर्ण है कि ऐसी इंकारियां, विश्व व्यापार संगठन अभिस्वीकृत करारों के अधीन

भी अपेक्षित नहीं है। इसलिए यह आवश्यक है कि भारत को ऐसी विभेदकारी इंकारियां और निर्बंधनों का मुकाबला करने के लिए सज्जित किया जाए।

अतः, यह सिफारिश की जाती है धारा 134 में, "जो वह अपने राष्ट्रिकों को देता है" शब्दों के पश्चात् और "वहां ऐसे देश को कोई भी राष्ट्रिक" शब्दों के पूर्व "एकपक्षीय निर्यात प्रतिषेध के रूप में, चाहे सुरक्षा के आधार पर हो या अन्यथा, प्रौद्योगिकी के किसी क्षेत्र में, चाहे वह उत्पाद हो या प्रक्रिया, किसी पेटेंटकृत आविष्कार तक पहुंच निवारित करता है या रोके रखता है" शब्द अंतःस्थापित किए जाएं। सुझाया गया यह परिवर्धन पूर्णतः संगत है—वास्तव में यह धारा 134 में अंतर्निहित उद्देश्य को अग्रसर करता है और ऐसे एकपक्षीय विभेदकारी निर्बंधनों के विरुद्ध न केवल हमसे विरोध को रजिस्टर करने के लिए अनिवार्य है अपितु यह पारस्परिकता के सिद्धांत को पूर्णतः प्रभावी बनाने के लिए भी है। तदनुसार, एक नई धारा, धारा 8, धारा 134 में पूर्वोक्त शब्दों को अंतःस्थापित करके संशोधन विधेयक पुरःस्थापित किया जाए।

हम तदनुसार सिफारिश करते हैं।

(न्यायमूर्ति श्री वी०पी० जीवन रेड्डी) (सेवानिवृत्त)

अध्यक्ष

(न्यायमूर्ति श्रीमती लीला सेठ) (सेवानिवृत्त) (डा० एन०एम० घटाटे) (डा० सुभाष सी० जैन)

सदस्य

सदस्य

सदस्य-सचिव

तारीख: 25 फरवरी, 1999

PLD-92.CLXVII (Hindi)

100—2000—DSK IV

Price : Rs. 183.00 Foreign £ 2.65 or Cents 3.81

Printed by the Manager, Government of India Press (PLU), Minto Road,
New Delhi and Published by the Controller of Publications, Delhi. 2002